गांधी और सिनेमा का अंतर्संबंध

आकाश कुमार
शोधार्थी,
गांधी विचार एवं शांति अध्ययन केंद्र
गुजरात केंद्रीय विश्वविद्यालय, गांधीनगर
Mob – 9265144589
Email – akashnawab99@gmail.com

सारांश

भारत में सिनेमा अभिव्यक्ति के लोकप्रिय माध्यम के रूप में जाना जाता है।अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम होने के साथ-साथ सिनेमा लोगों के सामाजिक सृजन में महत्वपूर्ण योगदान देता है| माध्यमों के अनेक प्रकारों में से समाजीकरण के प्रमुख स्त्रोत रूप में फिल्मों के प्रभाव को नजरंदाज़ नहीं किया जा सकता। वैश्विक शिक्षण जगत में मोहनदस करमचंद गांधी से सम्बंधित किताबों की बहुलता है। गांधी के जीवन व व्यक्तित्व को समझने में ये रचनाएँ निर्णायक भूमिका निभाती हैं। फिर भी सामान्य जन के दृष्टिकोण से इन किताबों की सीमा यह है कि इनकी पहुँच अशिक्षित वर्ग तक नहीं है। इसके विपरीत,गांधी से सम्बंधित सूचनाओं को हर वर्ग तक आसानी से पहुँचाने में सिनेमा ने महती भूमिका न्जिभायी है। गांधी भारत के एकमात्र ऐसे व्यक्ति हैं जिन्हें फिल्मों में सबसे अधिक दर्शाया गया है। फिल्म के एक पात्र के रूप में वे सिर्फ भारतीय सिनेमा में ही नहीं बल्कि विदेशी सिनेमा में भी प्रकट होते हैं। गांधी का दर्शन एवं सन्देश औपनिवेशिक काल से ही भारतीय सिनेमा की विषय-वस्तु में उपस्थित रहा है। इसके बावजूद अकादमिक स्तर पर गांधी और सिनेमा के अंतर्संबंधों पर बहुत सीमित कार्य हुआ है। इस अर्थ में यह शोध-पत्र गांधी और सिनेमा के पारस्परिक संबंधों को विश्लेषित करता है और साथ ही गांधी और सिनेमा से जुड़े महत्वपूर्ण पहलुओं को उजागर करने का प्रयास करता है।

बीज शब्द *गाँधी, सिनेमा, हिंदी सिनेमा, प्रत्यक्ष सन्दर्भ, अप्रत्यक्ष सन्दर्भ, अदृश्य सन्दर्भ*

भूमिका

मोहनदास करमचंद गांधीभारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के सबसे अहम् व्यक्तित्व थें। उन्होंने देश की आज़ादी के आन्दोलन में जन-माध्यमों का समुचित उपयोग पूरी सटीकता से किया। जन-माध्यमों के उत्कृष्ट उपयोग से व्यापक जन-समूह तक अपनी बात पहुँचाने में गांधीमहारथी थें जिस कारण उन्हें 'मास-लाइन कम्यूनिकेटर' भी कहा जाता है (सिंह, 1979)। यह गांधीकी संचार कुशलता ही थी कि उन्होंने बिना किसी विज्ञापन के ही 'यंग इंडिया' और 'हरिजन' जैसे साप्ताहिकों का सफल प्रकाशन किया तथा उन्हें जन-जन में सर्वाधिक लोकप्रिय बना दिया। 12 नवम्बर, 1947 को गांधी ने पहली बार रेडियो का उपयोग कर

रिफ्यूजी कैम्पों में ठहरे 2 लाख से भी अधिक शरणार्थियों तक अपनी बात पहुंचाई। रेडियो को लेकर गांधीकी यह टिप्पणी थीकि "मैं इसमें एक शक्ति देखता हूँ ; इश्वर की चमत्कारी शक्ति" (बरारा, 2013)।

सिनेमा पर गांधी के विचार

यह बात स्पष्ट है कि गांधीजन-माध्यमों की शक्ति और जन-आंदोलनों में इनकी उपयोगिता को बखूबी समझते थें। परन्तु सिनेमा को लेकर उनके विचार बहुत नकारात्मक थें। यधपि सिनेमा उनके समय में ही लोकप्रिय माध्यमों की सूचि में अपनी जगह बना चूका था, फिर भी उन्होंने सिनेमा से हमेशा दूरी बनाये रखी। वास्तव में, गांधीसिनेमा को जुआ और सट्टे की तरह ही एक प्रकार का व्यसन मानते थें (राय, 2011)। गांधीने अक्सर सिनेमा के प्रति अपना विरोध जताया था। 1927 में 'भारतीय सिनेमेटोग्राफ समिति' ने सिनेमा पर उनके विचार जानने के लिए एक प्रश्नावली भेजी थी। गांधीने समिति के अध्यक्ष टी. रंगाचरियर को वह प्रश्नावली बिना उत्तर दिए ही एक पत्र के साथ वापस भेज दी। पत्र में गांधीने लिखा था कि 'यद्यपि आपने मुझे चुना है, मैं आपकी प्रश्नावली का उत्तर देने के लिए अनुपयुक्त हूँ क्योंकि मैंने कभी सिनेमा नहीं देखा है। फिर भी एक बाहरी के तौर पर मुझे लगता है कि सिनेमा ने जो खराबी की है और कर रहा है वह स्पष्ट है। यदि इसने कुछ भी अच्छा किया है तो उसका साबित होना अभी बाकि है' (उद्धृत, त्रिपाठी, 2010)। सिनेमा के प्रति गांधीकी उदासीनता लगातार बनी ही रही। 1938 में जब देश में भारतीय सिनेमा का रजत जयंती समारोह मनाया जा रहा था तो आयोजकों की यह इच्छा थी की वें इस अवसर पर सिनेमा के बारे में गांधीका सन्देश भी प्रकाशित करें। इस आशय से उन्होंने गांधीको पत्र लिखा जिसके जवाब में गांधीके सचिव ने यह उत्तर दिया कि 'नियम के अनुसार गांधीजी दुर्लभ अवसरों पर ही सन्देश दिया करते हैं और वह भी मात्र उन कारणों के लिए जिनकी उपयोगिता पर कोई संदेह नहीं रहता। सिनेमा उद्योग में उनकी कोई रूचि नहीं है और इसके लिए कोई उनसे प्रशंसा के शब्दों की उम्मीद बिलकुल नहीं करे' (उद्धृत, त्रिपाठी, 2010)।

सिनेमा को लेकर अपनी अरुचि को गांधी ने खुद के पत्र 'हरिजन' में भी साझा किया था। 'हरिजन' के 3 मई 1942 वाले अंक में वे सिनेमा के लिए लिखते हैं, 'यदि मैं सिनेमा की बुराइयों को नज़रंदाज़ करते हुए उनके समर्थन में गोलबंदी शुरू करूँ तो मैं अपनी पहचान, अपना महात्मत्व खो दूंगा.... मैं कह सकता हूँ

कि फ़िल्में अक्सर बुरी होती हैं' (उद्धृत, त्रिपाठी, 2010)। इस प्रकार से सिनेमा के बारे में गांधीकी हमेशा यही राय रही कि यह समाज के लिए एक बुराई है।

सिनेमा के लिए गांधीकी इस उदासीनता को तब के प्रगतिशील फिल्मकर्मियों ने बहुत गंभीरता से लिया था। बहुतों ने उन्हें यह विश्वास दिलाने का भी प्रयास किया कि समाज में नैतिकता के प्रसार के लिए सिनेमा एक प्रभावशाली साधन है। इस आशय से मशहूर सिनेकर्मी ख्वाजा अहमद अब्बास ने 1939 में गांधीको उनके जन्मदिन पर एक लम्बा पत्र लिखा। अब्बास ने उस पत्र में गांधीसे कहा कि जिस तरह से कोई बालक समस्या के समाधान के लिए अपने पिता के पास दौड़कर जाता है उसी तरह मैं अपनी समस्या के समाधान के लिए इस राष्ट्र के पिता के पास दौड़कर आया हूँ। अब्बास की समस्या यह थी कि गांधी सिनेमा को इतना हानिकारक क्यों मानते हैं। तब के प्रसिद्ध फिल्म समीक्षक बाबुराव पटेल ने भी सिनेमा को लेकर गांधी द्वारा की गयी निंदा पर 1940 में 'फिल्म इंडिया' मैगजीन में बहुत तीखी टिप्पणी की थी। बाबुराव पटेल को इस बात का बहुत रोष था कि गांधी सिनेमा को एक तुच्छ वस्तु मानते हैं (नक़वी, 2015)।

यद्यपि गांधी स्वयं पर की गयी टिका-टिप्पणी का जवाब जरुर देते थें परन्तु उपरोक्त विषय पर उन्होंने कभी कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया। हाँ, अपने बाद के दिनों में वे सिनेमा के प्रति थोड़े कोमल अवश्य हो गए थें। 1939 में गांधी ने खुद गुजरात के मशहूर फिल्म निर्माता विजय भट्ट से प्रसिद्ध गुजराती संत-कवि नरसिंह मेहता के ऊपर फिल्म बनाने को कहा। गांधी के इस सुझाव से प्रेरित होकर विजय भट्ट ने 1940 में "नरसी भगत" नाम से फिल्म बनायी परन्तु अपने व्यस्त कार्यक्रमों के कारण गांधी इस फिल्म को नहीं देख सके। फिर भी, कुछ सालों बाद 1944 में विजय भट्ट की एक दूसरी धार्मिक फिल्म "रामराज्य" की विशेष स्क्रीनिंग पर गांधी उपस्थित रहें (प्रेमचंद, 2013)। हालाँकि गांधी ने इस फिल्म को अंत तक देखा था, पर इस फिल्म देखने का उनका अनुभव बहुत ही खराब रहा (जेफ्री, 2006)।

'रामराज्य' अकेली फिल्म नहीं थी जिसे गांधी ने देखा था। उन्होंने बाद में एक फिल्म और देखी थी। गांधी के सानिध्य में अपने बचपन का तक़रीबन एक साल बिता चुके नेपाल के सुप्रसिद्ध गांधीवादी गोपालदास श्रेष्ठ बताते हैं कि 1943 में गांधी ने एक शुभ-चिन्तक के घर पर एक विदेशी फिल्म "मिशन टु मास्को" भी देखी थी। गोपालदास के अनुसार गांधी को इस पश्चिमी फिल्म में महिलाओं का छोटे कपड़े पहनना और अप्रासंगिक बॉल-डांस जरा भी पसंद नहीं आया था ("गांधीजी'ज रांदेवू", 2010)। इस प्रकार से अपने पूरे

जीवनकाल में सिनेमा के साथ गांधी का खुद का सम्बन्ध उपरोक्त वर्णित इन दो फिल्मों तक ही सिमित रहा और सिनेमा के बारे में गांधी की अंत तक यही राय रही कि यह लोगों को आज़ादी और सुधार के रास्ते से भटकाता है (जेफ्री, 2006)।

उपरोक्त बातों से यह स्पष्ट है कि सिनेमा के बारे में गांधी का बहुत ही नकारात्मक मत था और वे इसे सामाज के नैतिक विकास में बाधक मानते थें। अपने इस दृढ मत के कारण ही गांधीने सिनेमा से कभी कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं बनाया और ना ही इसके प्रचार-प्रसार में कोई योगदान दिया। परन्तु प्रसिद्ध फिल्म-विशेषज्ञ जयप्रकाश चौकसे ठीक इसके विपरीत बताते हैं। चौकसे कहते हैं कि यद्यपि गांधी का फिल्म-जगत से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं था पर उन्होंने भारतीय सिनेमा के विकास में बहुत ही निर्णायक भूमिका निभाई थी। चौकसे के अनुसार, सिनेमा और गांधी में सबसे खास समानता यह थी कि लगभग एक ही काल-खंड में दोनों का अविर्भाव देश में एक क्रांति की तरह हुआ था। प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान अंग्रेजी हुकूमत की नीतियाँ और भी दमनकारी हो गयी थीं जिससे समाज में चारो और भय और आतंक का माहौल व्याप्त हो चूका था। लोग शाम के बाद घरों से निकलना बंद कर चुके थें। डर और मायूसी में जकड़े लोगों ने सिनेमाघरों में भी जाना बंद कर दिया था जिससे फिल्मों के दर्शकों की संख्या में भरी गिरावट हो चुकी थी; बहुत से सिनेमाघरों में शाम के बाद ताला लटक जाता था। इसी दौरान 1916 में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थपाना के अवसर पर गांधीने बनारस में एक भाषण दिया जिसमें उन्होंने लोगों से भयमुक्त होने की अपील की। गांधीने अपने भाषण में कहा कि डर से हिंसा उत्पन्न होती है इसलिए हम सभी का भयमुक्त होना बहुत जरुरी है। भारतीय लोग गांधी की इस साधारण सी पर बहुत अधिक प्रेरणा देने वाली बात से काफी प्रभावित हुएं। जिसके फलस्वरूप उन्होंने रात में घरो से निकलना शुरू कर दिया। परन्तु मायूसी की इस गहरी परत को मिटाने के लिए मनोरंजन का होना बहुत आवश्यक था और इस मनोरंजन की तलाश में लोग फिर से सिनेमाघरों का रुख करने लगें। इस प्रकार से गांधी के कारण, भले ही अप्रत्यक्ष रूप से, देश में मंद पड़ रहे सिनेमा व्यवसाय को फिर से गति मिली। इसके अलावा भी भारतीय सिनेमा के विकास में गांधी ने एक बहुत ही अनूठा योगदान दिया था। गांधी ने जब 1920 में असहयोग आन्दोलन की शुरुआत की तो उन्होंने देशवासियों से विदेशी वस्तुओं एवं संस्थानों का बहिष्कार करने की अपील की। देशभक्ति कि इस लहर में बहुत से मेधावी छात्रों ने अंग्रेजी सरकार द्वारा चलाये जा रहे स्कूल-कॉलेजों में

जाना बंद कर दिया, बहुत से सरकारी कर्मचारियों ने भी अपनी नौकरी छोड़ दी। तब सिनेमा देश में एक उभरता हुआ व्यवसाय था परन्तु इस व्यसाय को हेय दृष्टि से देखा जाता था और अधिकांश लोग इस क्षेत्र में जाने से संकोच करते थें। लेकिन असहयोग आन्दोलन के कारण बहुत से प्रगतिशील देशभक्तों ने विदेशी सेवाओं का त्याग कर सिनेमा के क्षेत्र में जाना उचित समझा, मशहूर फिल्म-निर्माता देवकी नंदन बोस उनमें से एक थें। इस अर्थ में, गांधी के असहयोग आन्दोलन ने भारतीय सिनेमा को मेधावी कलाकार, निर्देशक, लेखक, तकनिकी लोग, इत्यादि को पाने में अप्रत्यक्ष रूप से बड़ा योगदान दिया (चौकसे, 2012)।

सिनेमा की विषय-वस्तु के रूप में गांधी का प्रादुर्भाव

यदि हम गांधी और सिनेमा के सम्बन्ध को सिनेमा की दृष्टि से देखें तो हम पाते हैं कि सिनेमा ने शुरुआत से ही गांधी के साथ बहुत सपष्ट एवं आत्मीय सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया। गांधी सिनेमा के लिए एक विशिष्ट एवं प्रतिष्ठित विषय रहे हैं । बहुत से देशी-विदेशी फिल्मकारों ने समय-समय पर गांधी के जीवन एवं दर्शन में रूचि दिखाते हुए उनसे समबन्धित फ़िल्में बनायी हैं। यद्यपि अधिकांश फिल्म-विशेषज्ञों का कहना है कि फिल्म के मुख्य पात्र या सहायक पात्र के रूप में गांधी का सुनहले पर्दे पर आगमन रिचर्ड एटैनब्रो की विश्व प्रसिद्ध फिल्म *गांधी* (1982) के बाद ही शुरू होता है पर यह पूरा सच नहीं है; सिनेमा ने इस विश्व विख्यात व्यक्तित्व को एटैनब्रो की फिल्म से पहले भी तरजीह दिया था। रेचल ड्वायर अपने लेख 'द केस ऑफ द मिसिंग गांधी इन हिंदी सिनेमा' में बताती हैं कि विदेशी फिल्मकार हमेशा से ही गांधी के ऊपर फिल्म बनाना चाहते थें, हालाँकि उनकी फिल्मों में गांधी का महात्मा होना जरुरी नहीं था। ड्वायर के अनुसार, ब्रिटिश सरकार ने 1923 में ही हॉलीवुड के प्रख्यात फ़िल्मकार डी. डबल्यु. ग्रिफिथ को गांधी की नकारात्मक छवि वाली फिल्म बनाने का प्रस्ताव दिया था, पर अमुक कारणों से इस परियोजना में कोई वृद्धि नहीं हो पाई। हंगरी के मशहूर फ़िल्मकार गैब्रियल पास्कल और डेविड लीन ने भी गांधी के जीवन पर फिल्म बनाने का प्रयास किया था, इस आशय से वे 1958 में भारत भी आयें पर तब के भारत की सरकार ने उन्हें गांधी पर फिल्म बनाने की मंजूरी नहीं दी (सुरूर, 2010)।

इस प्रकार से शुरुआती दिनों में गांधी पर फिल्म बनाने के विचार को ज्यादा बल नहीं मिला। लेकिन 1948 में उनकी हत्या के बाद पश्चिमी देशों में गांधी के ऊपर बहुत से सफल वृत्तचित्र (डाक्यूमेंट्री) बनें। उदहारण के लिए, 1953 में अमेरिका में *महात्मा गांधी: ट्वेंटीएथ सेंचुरी प्रोफेट* के नाम से बना वृतचित्र बहुत ही

सफल रहा। 1963 में हॉलीवुड में मार्क रोब्सन के निर्देशन में गांधी से सम्बंधित एक पूरी फीचर फिल्म *नाइन आर्स टु रामा* बनी जो स्टैनले वोलपर्ट के इसी नाम से काल्पनिक उपन्यास पर आधारित थी। फिल्म का विषय नाथूराम गोडसे के द्वारा गांधी की हत्या से ठीक पहले के नौ घंटों पर केन्द्रित था (त्रिपाठी, 2010)।

अगर गांधी-केन्द्रित फिल्मों पर भारतीय सिनेमा के हिसाब से नजर डाली जाए तो हम पाते हैं कि यहाँ गांधी-केन्द्रित फिल्मों का चलन बहुत बाद में शुरू हुआ। इसका मुख्य कारण यह भी था कि अंग्रेजी सरकार को एक संचार माध्यम के रूप में सिनेमा की क्षमता बखूबी पता थी जिस कारण से भारत में सिनेमा को नियंत्रित करने के लिए 1920 में ही सेंसर के कड़े प्रावधान लागु कर दिए गए थें। तब भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को बल देने वाली फ़िल्में बनाना नामुमकिन था और गांधी के ऊपर फिल्म बनाने कि बात कोई फ़िल्मकार सोच भी नहीं सकता था। उदहारण के लिए, 1936 में ब्रिटिश सरकार ने मराठी संत-कवि एकनाथ के जीवन पर आधारित एक फिल्म पर सिर्फ इसलिए प्रतिबंध लगा दिया क्यूंकि इसका शीर्षक "*महात्मा*" था। फिल्म का नाम बदलकर *धर्मात्मा* करने के बाद ही इस फिल्म को रिलीज़ करने की अनुमति मिली (श्रीवास्तव, 2006)। फिर भी कुछ हिम्मती फिल्मकारों ने उस दौर में भी गांधी पर फिल्म बनाने का प्रयास किया; तमिलनाडु के प्रसिद्ध पत्रकार ए. के. चेट्टीअर ने 1941 में *लाइफ ऑफ महात्मा गांधी* नाम से गांधी पर पहला वृतचित्र बनाया।

भले ही ब्रिटिश सेंसर नियमों के कारण भारतीय फ़िल्मकार प्रत्यक्ष रूप से गांधी पर फिल्म बनाने में असमर्थ थें परन्तु उन्होंने अप्रत्यक्ष रूप से अवश्य ही गांधी को अपनी फिल्मों के केंद्र में रखा। उदहारण के लिए, भारतीय सिनेमा के मूक युग में ही कांजीभाई राठोड़ ने 1921 में *भक्त विदुर* नाम से एक फिल्म बनायी। हालाँकि यह फिल्म हिन्दू महाकाव्य महाभारत के एक चरित्र विदुर पर केन्द्रित थी पर फिल्म में विदुर के पात्र को हुबहू गांधी की तरह दिखाया गया था। फिल्म में विदुर के पात्र को गांधी की तरह के कपड़े पहनाए गए थें, उसकी चाल-ढाल वेश-भूषा सब एकदम गांधी के जैसी ही थी। गांधी से समानता को बढ़ने के लिए फिल्म में विदुर के पात्र को लाठी भी पकड़ायी गयी थी। फिल्म के संवाद और दृश्य भी महाभारत से ज्यादा तब के वास्तविक राजनैतिक परिदृश्य से मेल खाते थें। अंग्रेजी सरकार ने *भक्त विदुर* पर मद्रास और कराची में यह कह कर प्रतिबन्ध लगा दिया था कि 'हम जानते हैं आपलोग क्या कर रहे हैं,

यह विदुर नहीं हैं, यह गांधीजी हैं, हम इसकी अनुमति नहीं दे सकते'। गांधी के साथ फिल्मों के पात्रों कि सादृश्यता *संत तुकाराम* (1936), *ब्रह्मचारी*(1938) तथा औपनिवेशिक काल की और भी दूसरी फिल्मों में जारी रही (वुड्स, 2011)।

भारतीय सिनेमा के दृष्टिकोण से यह बात जरुर विचारणीय है कि आज़ादी के बहुत सालों बाद भी स्पष्ट रूप से गांधी पर केन्द्रित फीचर फिल्म नहीं बन पायी थी। इस मुद्दे कि गंभीरता को समझते हुए 1963 में तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने राज्यसभा में कहा था कि 'गांधीजी पर फिल्म का निर्माण करना एक सरकारी प्रभाग के लिए बहुत कठिन है। सरकार इसके लिए अयोग्य है क्योंकि हमारे पास इस काम के लिए सक्षम लोग नहीं हैं' (उद्धृत, रॉय, 2010)। बाद के दिनों में सरकार और गांधीवादी संस्थाओं ने मिलकर गांधी के जीवन से सम्बंधित कुछ वृतचित्र और लघु-फिल्मों का निर्माण अवश्य किया था (चौकसे, 2012)। इस प्रकार यह बात तो बिलकुल स्पष्ट है कि 1982 में एटैनब्रो की *गांधी* के प्रदर्शन से पहले भी भारतीय सिनेमा ने गांधी पर फिल्म बनाने का प्रयास किया था, भले ही उन प्रयासों की संख्या कम थी।

_गांधी_ (1982) : गांधी पर बनी सबसे चर्चित फिल्म

गांधी और सिनेमा का विश्लेषण इस विश्व विख्यात फिल्म पर चर्चा किये बिना पूरा नहीं हो सकता है। 1982 में प्रदर्शित *गांधी* विश्व की पहली फीचर फिल्म थी जिसमें गांधी को मुख्य पात्र के रूप में चित्रित किया गया था। अपनी पहली स्क्रीनिंग के साथ ही इस फिल्म ने पुरे विश्व में सफलता के झंडे गाड़ दिए। जैसा कि मार्क जुएर्गेन्स्मेयेर (1984) कहते हैं, 'अगर भारतीय और विदेशी दर्शकों कि संख्या को जोड़ दिया जाए तो रिचर्ड एटैनब्रो की *गांधी* किसी जीवित व्यक्ति पर बनी इतिहास में सबसे अधिक देखी जाने वाली फिल्म है'। इस फिल्म की प्रसिद्धि और लोकप्रियता का अंदाज़ा इसी से लगाया जा सकता है कि अमेरिका के विश्व-प्रतिष्ठित 55वें अकादमी पुरस्कार के अवसर पर इसने ग्यारह श्रेणीओं में से आठ ऑस्कर जीते जिसमें सर्वश्रेष्ठ फिल्म, सर्वश्रेष्ठ निर्देशक, सर्वश्रेष्ठ अभिनेता जैसे पुरस्कार शामिल थें (पटवर्धन, 1983)|

गांधी को बहुत से लोग पूरी तरीके से एक विदेशी फिल्म मानते हैं। परन्तु इस फिल्म के निर्माण में भारतीय फिल्म विकास प्राधिकरण का भी पैसा लगा था तथा इसके बहुत से कलाकार और कर्मी भारतीय ही थें। इस फिल्म कि परिकल्पना करने वाले मोतीलाल कोठारी भी भारतीय मूल के थें। इस फिल्म का सबसे बड़ा योगदान यह था कि इसने गांधी को वैश्विक समकालीन वाद-विवाद में पुनर्जीवित कर दिया। समूचे विश्व के लोगों में गांधी के जीवन व दर्शन को जानने की उत्सुकता बढ़ गयी जिस कारण अचानक ही गांधी पर बहुत से शोध होने लगें, पाश्चात्य विश्वविद्यालयों में गांधीअध्ययन केंद्र स्थापित किये गयें (जुएर्गेन्स्मेयेर, 1984)| इस प्रकार एक फिल्म ने गांधी को वैश्विक शिक्षण जगत में मजबूती से स्थापित कर दिया। सिनेमा की दृष्टि से देखा जाए तो इस फिल्म ने भारतीय फिल्मकारों को ना सिर्फ गांधी के ऊपर फिल्म बनाने के लिए प्रेरित किया बल्कि भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के दुसरे नेताओं को भी फिल्म की विषय-वस्तु के रूप में चुनने का साहस दिया।

हिंदी सिनेमा और गांधी

धनन्जय राय (2011) के अनुसार, हिंदी सिनेमा ने गांधी को मुख्यतः तीन प्रकार **प्रत्यक्ष सन्दर्भ**, **अप्रत्यक्ष सन्दर्भ** और **अदृश्य सन्दर्भ** के रूप में प्रदर्शित किया। प्रत्यक्ष सन्दर्भ से आशय उन फिल्मों से है जो प्रकट रूप से गांधी से सम्बंधित हैं। अर्थात इन फिल्मों में गांधी सीधे तौर पर मुख्य पात्र या सहायक पात्र के रूप में फिल्म की विषय-वस्तु में शामिल होते हैं। इन फिल्मों की विशेषता यह होती है कि इनमें गांधी के चरित्र को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर हर समस्या के सामाधान के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। ये फ़िल्में गांधी को एक व्यक्ति से ज्यादा किसी दोष-रहित दिव्य संत या महात्मा की तरह चित्रित करती हैं। इस अर्थ में ये फ़िल्में गांधी के चरित्र के साथ न्यायसंगत नहीं हो पाती। *सरदार* (1993), *गांधी से महात्मा तक* (1996), *हे राम* (2000), *वाटर* (2005), *लगे रहो मुन्नाभाई* (2006), *गांधी माय फादर* (2007) और *गांधी टु हिटलर* (2011) इसी श्रेणी की फ़िल्में हैं।

अप्रत्यक्ष सन्दर्भ से आशय उन फिल्मों का है जिनमें गांधी सीधे-सीधे के बजाय परोक्ष रूप से प्रकट होते हैं। यहाँ गांधी कभी मुख्य पात्र नहीं होते और कभी-कभी तो फिल्म में प्रकट भी नहीं होते परन्तु वे फिल्म की विषय-वस्तु का अहम हिस्सा रहते हैं। इन फिल्मों की मुख्य विशेषता यह होती है कि ये अपने मुख्य पात्र की सहायता से गांधी के चरित्र के हर पहलू को कमोबेश उजागर करने का प्रयास करती हैं। यहाँ गांधी

किसी संत या महात्मा से अधिक एक सामान्य व्यक्ति होते हैं। *वीर सावरकर* (2001), *द लीजेंड ऑफ भगत सिंह* (2002), *नेताजी सुभाष चन्द्र बोस* (2005), *मैंने गांधी को नहीं मारा* (2005), *रोड टु संगम* (2009), *सत्याग्रह* (2013), *गौर हरि दास्ताँ* (2015) इस श्रेणी की कुछ प्रसिद्ध फ़िल्में हैं।

अदृश्य सन्दर्भ का तात्पर्य वैसी फिल्मों से है जिनमें गांधी ना तो पात्र के रूप में ना ही प्रतीकों के रूप में प्रकट होते हैं बल्कि विचारधारा के रूप में फिल्म से जुड़े होते हैं। ये फ़िल्में गांधी-दर्शन के मुख्य आयामों जैसे – सत्य, अहिंसा, असंचय, ग्रामीण विकास, सामाजिक सद्भाव, छुआ-छुत का उन्मूलन आदि विषयों पर केन्द्रित होती हैं। हिंदी सिनेमा में इस शैली के फिल्मों की बहुलता रही है और आज़ादी से पहले की फिल्मों से ही गांधी का अदृश्य सन्दर्भ हिंदी सिनेमा में अक्सर परिलक्षित होते रहा है।

निष्कर्ष

गांधी ने सिनेमा को कभी पसंद नहीं किया लेकिन सिनेमा ने गांधी को बहुत महत्व दिया और समय-समय पर अलग-अलग तरीके से उपयोग भी किया। भारतीय सिनेमा में गांधी मुख्यतः तीन प्रकार - प्रत्यक्ष सन्दर्भ, अप्रत्यक्ष सन्दर्भ और अदृश्य सन्दर्भ से प्रकट होते हैं। गांधी का फिल्मों में प्रत्यक्ष सन्दर्भ के रूप में आगमन भले ही एटैनब्रो की *गांधी* की अपार सफलता के बाद शुरू होता है परन्तु अप्रत्यक्ष सन्दर्भ और अदृश्य सन्दर्भ के तौर पर वे औपनिवेशिक काल से ही भारतीय फिल्मों में परिलक्षित होते रहे हैं।

समकालीन फिल्मकारों पर गांधी के विचारों का बहुत गहरा प्रभाव रहा है। गांधीवाद के आलोक में भारतीय सिनेमा को सामाजिक सद्भाव एवं ग्रामीण जीवन जैसे दो महत्वपूर्ण विषय प्राप्त हुए हैं। परन्तु विडम्बना यह है कि इन दो महत्वपूर्ण विषयों में से सामाजिक सद्भाव तो अब तक भारतीय सिनेमा में प्रासंगिक बना हुआ है परन्तु ग्रामीण जीवन को नजरंदाज़ कर दिया गया है। फिर भी गांधी अभी भी बहुत से फिल्कारों के लिए प्रेरणा के स्त्रोत हैं उनका दर्शन एवं सन्देश कमोबेश समय-समय पर फिल्मों द्वारा प्रसारित होते रहते हैं। उदहारण के लिए, कोई फिल्म जो पूर्ण रूप से समाजिक मुद्दे पर आधारित हो, जिसकी कहानी सामाजिक सद्भाव का सन्देश देती हो, जिसमें स्टंट, मार-धाड़, आईटम गीत, अन्तरंग दृश्य, गाली-गलौच जैसी चीजें नहीं हों, जिसके पात्रों का नैतिक मूल्य ऊँचा हों, वें सत्य के साथ कभी समझौता नहीं करते हों

तथा समाज की भलाई के लिए खुद की भी आहुति देने में संकोच नहीं करते हों तो ऐसी फिल्म को आंशिक या पूर्ण रूप से एक गांधीवादी फिल्म माना जा सकता है।

सन्दर्भ सूची:

- बरारा, एस. (2013, जून 24). ब्राडकास्टिंग नॉन-वायलेंस. द *हिन्दू*.
- चौकसे, जे. (2012). *महात्मा गांधी और सिनेमा* . मुंबई: मोर्या आर्ट्स.
- गांधीजी'ज रांदेवू विद फिल्म एट 74. (2010, फ़रवरी 8). द *हिन्दू*.
- जेफ्री, आर. (2006). द महात्मा डीडन्ट लाइक द मूवीज एंड व्हाई इट मैटर्स: इंडियन ब्राडकास्टिंग पालिसी, 1920 -1990. *ग्लोबल मीडिया एंड कम्युनिकेशन*.
- जुएर्गेन्स्मेयेर, एम. (1984). द गांधी रिवाइवल: अ रिव्यु आर्टिकल. *जर्नल ऑफ एशियन स्टडीज*.
- नकवी, जे. (2015, दिसंबर 24). डीड गांधी हेट म्यूजिक, सिनेमा?. *डेक्कन क्रोनिकल*.
- पटवर्धन, ए. (1983, अप्रैल 16-23). 'गांधी': फिल्म ऐज थियोलोजी. *इपीडब्ल्यू*.
- प्रेमचंद, एम. (2013, अक्टूबर 2). रामराज्य, द ओनली इंडियन फिल्म महात्मा गांधी सॉ. *डीएनए*.
- राय, डी. (2011). पोपुलर हिंदी सिनेमा ऐज गांधी'ज आल्टर इगो: ऐन एक्सप्लोरेशन इन रेस्पेक्ट ऑफ गांधी, माय फादर. *सोशल चेंज*.
- सुरूर, एच. (2010, दिसम्बर 7). व्हाई इज गांधीजी 'मिसिंग' फ्रॉम हिंदी सिनेमा?. द *हिन्दू*.
- श्रीवास्तव, एस. (2006). *हिंदी सिनेमा का इतिहास*. नई दिल्ली: प्रकाशन विभाग, सुचना एवं प्रसारण मंत्रालय.
- सिंह, के. जे. (1979). कम्युनिकेशन एंड ट्रेडिशन इन रेवोलुशन्स: गांधी एंड माओ ऐज मास कम्यूनिकेटर्स. *जर्नल ऑफ कम्युनिकेशन*.
- त्रिपाठी, ए. (2010). गांधी ऑन एंड इन सिनेमा. *जर्नल ऑफ कम्युनिकेशन*.
- वुड्स, जे. (2011). *विज़न ऑफ एम्पायर एंड अदर इमाजिनिंग्स: सिनेमा, आयरलैंड एंड इंडिया 1902-1962*. ऑक्सफ़ोर्ड: पीटर लैंग.